International Journal of Hindi Research
ISSN: 2455-2232; Impact Factor: RJIF 5.22
Received: 06-08-2020; Accepted: 16-08-2020; Published: 07-09-2020
www.hindijournal.com
Volume 6; Issue 5; 2020; Page No. 07-10

प्राचीन भारतीय ग्रन्थों में महिलाओं की स्थिति: कौटिल्य के अर्थशास्त्र के विशेष संदर्भ में एक अवलोकन

अभिषेक कुमार
यूजीसी- जेआरएफ़, राजनीति विज्ञान विभाग, तिलका मांझी भागलपुर विश्वविद्यालय, बिहार, भारत

सारांश
प्रस्तुत शोध पत्र में प्राचीन भारतीय ग्रंथों में महिलाओं की स्थिति का अवलोकन करने का प्रयत्न किया गया है। ब्राह्मण ग्रंथों से लेकर स्मृति ग्रन्थों, उपनिषदों तथा महाकाव्यों आदि में महिलाओं की स्थिति का चित्रण करते हुए कौटिल्य के प्रसिद्ध ग्रंथ अर्थशास्त्र में उनकी भूमिका को टटोलने का प्रयत्न किया गया है। इस लेख में इस बात की भी दर्शाने की कोशिश की गई है कि कैसे कलानुक्रमिक रूप से महिलाओं की गिरावट समाज में होती गई है। भारतीय समाज में किस काल में महिलाओं के प्रति किस प्रकार का व्यवहार किया गया तथा उनसे किस प्रकार के व्यवहार की उम्मीद रखी गई, इसे भी इस आलेख में दर्ज करने का प्रयास किया गया है।

मूल शब्द: महिला, कौटिल्य, वेद, अर्थशास्त्र, ब्राह्मण ग्रंथ, उपनिषद

प्रस्तावना
पुरुष और महिला सृष्टि के सृष्टि रूपी रथ के दो पहिए हैं और उस रथ को चलाने के लिए दोनों ही पहियों का मजबूत होना आवश्यक है। समकालीन विश्व में नारीवाद तथा जेंडर स्टडीज को लेकर काफी शोध किया जा रहा है। वर्तमान समय में महिलाओं को उनके अधिकारों के बारे में जागरूक किया जा रहा है और कई बार हम महिलाओं की स्थिति को बेहतर करने के लिए पश्चिम की ओर उदाहरण के लिए देखते हैं, किंतु आवश्यकता इस बात की भी है, कि हम अपने प्राचीन धार्मिक तथा राजनीतिक ग्रंथों में महिलाओं की स्थिति का अवलोकन कर इस बात का अंदाजा लगाने की कोशिश करें,कि तत्कालीन भारतीय समाज में महिलाओं की स्थिति कैसी थी, क्योंकि ये वह देश है, जहाँ इला नामक महिला ने चंद्रवंशी शासन व्यवस्था की नींव डाली थी। प्राचीन भारतीय समाज में नारी की सामाजिक तथा राजनीतिक स्थिति को जानने के लिए यह आवश्यक है, कि हम अपनी बहुमूल्य धरोहरों को टटोलें। इसके लिए हम भारतीय धर्म ग्रंथ जैसे वेद, उपनिषद, स्मृतियों तथा कौटिल्य के महत्वपूर्ण ग्रंथ अर्थशास्त्र का सहारा लिया जा सकता है।

वैदिक साहित्य में भारतीय महिलाओं की स्थिति
प्राचीन भारतीय धर्म ग्रंथों में वेदों का महत्व सर्वाधिक है। आज भी हिंदू धर्म का सबसे प्रामाणिक ग्रंथ इन्हें माना जाता है, जिसकी रचना 1500 से लेकर 1000 ईस्वी पूर्व के मध्य तक मानी जा सकती है। हमें ज्ञात है, कि ऋग्वेद, सामवेद, यजुर्वेद और अथर्ववेद जैसे चार प्राचीनतम वेद हैं। इन वैदिक ग्रंथों में उत्तर वैदिक उत्तर वैदिक काल से लेकर महाजनपदकाल के उदय तक की राजनीतिक, सामाजिक तथा धार्मिक संस्कृति का ज्ञान प्राप्त होता है (जैन, 1971)। वेदों में अनेक सूत्रों के माध्यम से विवाह के प्रकार, नियोग, संपत्ति का विभाजन, स्त्री धन आदि पर प्रकाश डाला गया है (जैन, 1971)। ऐसे ग्रंथ के माध्यम से निश्चित रूप से तत्कालीन समाज में भारतीय महिलाओं की स्थिति का अंदाजा लगा सकते हैं।
वैदिक साहित्य में स्त्रियों को गृह शासिका के रूप में स्थापित किया गया है तथा साथ ही साथ एक बेहद सम्माननीय स्थिति दी गई है। कुल मिला कर वैदिक भारतीय काल में नारी एक रत्न की भांति थी, जो घर की एकमात्र अधिष्ठात्री देवी थी (शर्मा, 1971)। तत्कालीन समाज में यज्ञ का बेहद महत्वपूर्ण स्थान था तथा किसी भी अनुष्ठान में पत्नी के बिना पति की स्थिति को संपूर्ण नहीं समझा जाता था। स्त्रियों को समाज में एक बेहद मजबूत स्थान प्राप्त था तथा वह घर की वस्तुओं की स्वामिनी समझी जाती थी। हमारे भारतीय प्राचीन परंपरा के अनुसार माता पिता में माता को प्रथम स्थान दिया गया है, क्योंकि उसे सर्वाधिक सम्माननीय दर्जा भारतीय समाज में प्राप्त था। वैदिक समाज में न केवल स्त्रियों में शिक्षा का व्यापक प्रचार था, बल्कि वे अध्ययन के साथ-साथ सभी कार्य करती थी। नारी का योगदान आर्थिक स्थिति में भी बहुत महत्वपूर्ण था।

अन्य प्राचीन भारतीय ग्रन्थों में महिलाएँ
वैदिक साहित्य के उपरांत यदि हम ब्राह्मण ग्रंथों की बात करें, तो इसमें ऐतरेय ब्राह्मण, शतपथ ब्राह्मण, संख्यान ब्राह्मण, गोपथ ब्राह्मण इत्यादि अधिक महत्वपूर्ण है। इस काल में महिलाओं की स्थिति में गिरावट देखने को मिलती है और इस गिरावट का प्रारंभ उत्तर वैदिक काल में ही प्रारंभ होता है, गोया कि उत्तर वैदिक काल ही वह काल था, जब प्राचीन परंपरा में अपभ्रंश पैदा हुआ तथा समाज में कई प्रकार की विसंगतियों का चलन प्रारंभ हुआ। इसमें से महिलाओं की उपेक्षा भी थी। इस साल तक आते-आते बहु विवाह का प्रचलन प्रारंभ हो गया तथा गणिकाओं की परंपरा भी शुरू हो गई, किंतु उस वक्त तक गणिकाओं को भी सम्मान की दृष्टि से देखा जाता था, किंतु इस काल के आते-आते कन्या जन्म को अशुभ माना जाने लगा तथा इस बात के लिए विविध धार्मिक कृत्यों का संपादन करना प्रारंभ कर दिया गया, कि कन्या का जन्म ना हो। इसके बावजूद भी नारी पुरुष की सहधर्मिणी बनी रही तथा प्रारंभिक हिंदू समाज के बारे में संभावित ज्ञान हमें प्राप्त होता है। यज्ञ में स्त्री की अनिवार्यता बनी रही तथा स्त्री को यज्ञ का अधिकारी बताया गया। इस काल में भी वेदों का अध्ययन करने के लिए नारी स्वतंत्र रही। उस काल के जो भी बड़े-बड़े यज्ञ होते थे, चाहे वह अश्वमेध यज्ञ हो या राजसूय यज्ञ, पत्नियों की उपस्थिति अनिवार्य थी।
इसके बाद सूत्र साहित्य की बात की जा सकती है, जिनमें कल्प सूत्र, गृह सूत्र और धर्म सूत्र महत्वपूर्ण है। यही वह काल था जब कन्या के विवाह

आयु में निरंतर कमी आई तथा संभवतः युवावस्था के पास पहुंचते ही कन्याओं का विवाह कर दिया जाता था (सिंघल, 1991)। धर्म सूत्रों में नारी विषयक धर्मों पर यत्र तत्र विस्तृत विचार हुआ है और इस इन सूत्रों में नारी को गृहस्थ धर्म में पति के अधीन बताया गया है (गौतम) और इस वक्त तक आते-आते नारी की स्थिति दयनीय होती दिखलाई पड़ती है। नारी के आचरण पर बहुत अधिक जोर दिया जाना प्रारंभ हो गया। नारी के रूप का भी वर्णन प्रारंभ हुआ जिसमें ना वह किसी सम्मान के अधिकार नहीं है ना न्याय पाने की बल्कि उसे बस एक पुरुष की चल संपत्ति के रूप में देखा जाने लगा, जिसे कभी भी बेचा खरीदा या गिरवी रखा जा सकता है (सिंघल, 1991)। इस काल में नारी को पुरुष की दासी के रूप में प्रस्तुत किया जाने लगा। बाल विवाह के कारण कन्याओं की शिक्षा बंद कर दी गई तथा स्त्रियों को विधवा होने पर उसे नियोग द्वारा एक पुत्र की उत्पत्ति का अधिकार दिया गया (गौतम)। इस वक्त भी समाज में दो विपरीत तस्वीरें देखने को मिलती थी। एक तरफ माता के रूप में नारी का स्थान था, वही दूसरा दासी के रूप में थी, जहाँ अधिकारों में कटौती शुरू हो गई थी।

इसके बाद उपनिषदों की बात की जा सकती है। इसे वैदिक साहित्य का अंतिम भाग कहा जाता है। उपनिषदों को सुधारात्मक ग्रंथों के रूप में भी जाना जा सकता है। इस ग्रंथों में नारी शब्द का प्रयोग नहीं किया गया। यहां पर नारी तत्व एक सर्वशक्तिमान परमात्मा की शक्ति के रूप में गृहीत हुआ है उपनिषदों में नर और नारी दोनों को एक ही तेज की दो ज्योतियां बताई गई है। महिला को पुरुष के अनुपम सहकर्मी के रूप में माना जाता था। छंदोग्य तथा वृहदारण्यक उपनिषदों में नारी संबंधी कुछ विचार प्राप्त होते हैं तथा इस काल में कन्याओं उचित विद्या प्राप्त करती थी। विदुषी कन्याओं के लिए ईश्वर से प्रार्थना करते थे। गार्गी, मैत्रेयी जैसी विदुषी नारियों ने समाज में नारी का स्थान रोशन किया तथा माता सर्वथा वंदनीय थी (सिंघल, 1991)।

महाकाव्य काल में, जिनकी रचना ईसा पूर्व चौथी शताब्दी के आसपास मानी जाती है। रामायण में हम एक आदर्श स्त्री का चित्र उभरता हुआ पाते हैं और रामायण में महिलाओं की स्थिति अधिकारों का बोध होता है। शासन में भी स्त्रियों की सुविधा का ध्यान रखने के लिए विभिन्न नियम बने हुए थे। परिवार में पति के प्रभुता रखने पर भी पत्नी की प्रभुता में कोई कमी नहीं थी तथा गृहस्थाश्रम को सर्वश्रेष्ठ कहा गया है (शर्मा, 1971)। राजघरानों से लेकर साधारण परिवारों तक बहुपत्नीत्व प्रथा प्रचलन में थी। महाभारत काल में भी यह देखने को मिलता है, जिसमें कन्याओं की स्थिति सराहनीय थी। इस काल में द्रोपदी को एक बेहद सशक्त महिला के रूप में चित्रित किया गया है। महाभारत में इस बात का भी उल्लेख मिलता है, कि युधिष्ठिर के सिंहासन पर बैठने के अवसर पर उन्हें अलंकृत कन्याओं का दर्शन करवाया गया था (सिंघल, 1991)। कन्या को महा लक्ष्मी स्वरूप की भांति सर्वदा मंगल कारण एवं सुख की प्राप्ति करने वाली कहा गया है महाभारत काल में स्त्रियों की शिक्षा को स्थान दिया गया है तथा स्त्रियों को घर की लक्ष्मी माना गया है और इस बात को भी मान्यता दी गई है, कि महिलाएं परिवार के समस्त दुखों को हर लेती है तथा साथ ही साथ मनुष्य की लोक की यात्रा को मंगलमय बना देती है। एक पत्नी के रूप में महिला के गौरव का सर्वोत्कृष्ट रूप हमें महाभारत काल में देखने को मिलता है, जहां कई बार पति को पत्नी के प्रति झुकना भी झुकते भी दिखाया गया है। महाभारत में कुंती जैसी सशक्त महिला का चरित्र, गांधारी जैसी महिला का, जिसके संकल्प शक्ति का कोई दूसरा उदाहरण देखने को नहीं मिलता या फिर चाहे द्रौपदी का चरित्र सशक्त महिला के उदाहरण हैं। राज धर्म का उपदेश देते हुए कहा था कि अकेली माता ही अपनी गौरव के द्वारा समस्त पृथ्वी बना सकती है इसलिए माता के समान कोई दूसरा गुरु नहीं हो सकता पिता की कृपा से आलोक माता की कृपा से परलोक तथा गुरु की कृपा से ब्रह्मलोक में विजय प्राप्त होती है (सिंघल, 1991)।

विभिन्न स्मृति ग्रंथों में भी महिलाओं के बारे में जानकारी प्राप्त होती है। भारतीय सामाजिक व्यवस्था का विशद विवरण इन ग्रंथों में देखने को मिलता है। चाहे धर्म की बात हो सकती या जाति व्यवस्था की बात हो या किसी भी प्रकार की सामाजिक गतिविधियों की बात हो इसका विस्तार पूर्वक वर्णन इन स्मृति ग्रंथों में मिलता है। ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य, शूद्र नामक चार वर्ण ग्रंथों में बतलाए गए। इनमें से प्रथम तीन द्विज कहलाते हैं तथा गर्भाधान से श्मशान पर्यंत इनकी समस्त क्रियाएं वैदिक मंत्रों से संपन्न की जाती थी किंतु इस में ध्यान रखने योग्य बात यह थी कि सभी संस्कार जो स्त्रियों के लिए थे वह मंत्र रहित होते थे। स्त्रियों के केवल विवाह संस्कार में ही वैदिक मंत्र पढ़े जाते थे। स्मृति काल में बाल विवाह का प्रचलन स्पष्ट रूप से दिखाई पड़ता है।

याज्ञवल्क्य, व्यास तथा विष्णु स्मृतियों से यह प्रतीत होता है, कि रजोदर्शन से पूर्व ही कन्या का विवाह अभीष्ट था। विवाह को हिंदू संस्कारों में सरल प्रमुख स्थान दिया गया है और यह उस काल में यह माना जाता था कि कन्या के लिए योग्य वर ढूंढने वाला कोई संबंधी यदि ना हो तो वह स्वयं व रीति से विवाह कर सकती है। स्मृति ग्रंथों में पिता के अतिरिक्त अन्य संबंधियों को भी कन्यादान का अधिकार दिया गया था। सभी स्मृतियों में विवाह में कन्या को उत्तम अलंकार एवं आभूषण देने की स्पष्ट चर्चा प्राप्त होती है एवं वस्त्रों से सुसज्जित करके देने की बात कही गई है और माना गया है इस काल में पति की सेवा को ही पत्नी का मुख्य धर्म बताया गया है

बौद्ध तथा जैन ग्रन्थों में महिलाएँ

अगर हम हिंदू ग्रंथों के अतिरिक्त अन्य ग्रंथों की बात करें जैसे बौद्ध ग्रंथ तो उन ग्रंथों से हमें ज्ञात होता है कि बौद्ध काल में नारी की स्थिति बहुत कुछ उत्तर वैदिक युग के समान ही थी। महिलाओं का परिवार में महत्वपूर्ण स्थान था परंतु उसके समाज में स्वच्छता पूर्ण विचरण पर प्रतिबंध लग गए थे। स्त्रियां समाज के उत्सवों में पुरुषों के समान भाग तो लेती थी, परिवार के आगंतुक अतिथियों का स्वागत सत्कार भी करती थी तथा पशुओं की देखभाल भी। परिवार में माता का स्थान गौरवपूर्ण था। बौद्ध धर्म में एक महत्वपूर्ण बात यह जानने को मिलती है, कि बौद्ध धर्म के ग्रंथों में यह कहा गया है कि मोक्ष प्राप्ति हेतु पुत्र का होना अनिवार्य नहीं है। पुत्री को पुत्र के समान महत्व दिया जाता था। संयुक्त निकाय में भगवान बुद्ध का एक स्थान पर कथन है कि कभी-कभी पुत्री, पुत्र की तुलना में श्रेष्ठ होती है। वहीं जैन ग्रन्थों में आगम ग्रंथ आते हैं, जिससे हमें सामाजिक विषयों की जानकारी मिलती है। इन ग्रन्थों से यह ज्ञात होता है, कि बड़ी आयु में विवाह को शुभ नहीं माना जाता था। आम तौर पर विधवा विवाह की इजाजत थी, किन्तु उसे सम्मान की दृष्टि से नहीं देखा जाता था। इस काल में दहेज प्रथा ज़ोरों पर थी और महिला शादी में काफी धन लेकर आती थी।

कौटिल्य के अर्थशास्त्र में महिलाओं की स्थिति का चित्रण

इन समस्त ग्रंथों के अतिरिक्त कौटिल्य का अर्थशास्त्र निश्चित रूप से प्राचीन शास्त्रों में सबसे महत्वपूर्ण ग्रंथ है, जिसमें शासन व्यवस्था के साथ-साथ समाज के प्रत्येक पहलू पर चिंतन किया गया है और इसके अंतर्गत स्त्रियों की स्थिति पर भी विस्तार से चर्चा की गई है। कौटिल्य का अर्थशास्त्र इस कारण भी अधिक महत्वपूर्ण हो उठता है, क्योंकि इससे हम अपने ज्ञात इतिहास का हिस्सा मान सकते हैं और एक तरह से यह हमारे प्राचीन समाज का एक प्रामाणिक दस्तावेज है। इस ग्रंथ में कौटिल्य महिलाओं की स्थिति

को कई बिंदुओं में बांटते हुए समाज के अलग-अलग स्त्रियों की अलग-अलग स्थितियों को बताने की चेष्टा की है, चाहे वह कन्याओं की स्थिति हो, पत्नी की स्थिति हो, विधवाओं की स्थिति हो, गणिकाओं की स्थिति हो या स्त्री श्रमिकों की स्थिति क्यों ना हो।

कौटिल्य ने अर्थशास्त्र में कुछ पूर्ववर्ती मान्यताओं के विपरीत कन्याओं के जन्म को हर्ष का विषय माना है। हालांकि पारिवारिक परंपरा में वे भी पुत्र जन्म पर बल देते हैं। कौटिल्य ने बारह वर्ष की कन्या को रजस्वला प्राप्त करने के पश्चात विवाह योग्य माना है। उनके अनुसार कन्याओं का विवाह अपरिहार्य है और यदि रजस्वला प्राप्त करने के तीन वर्ष पश्चात तक उनका विवाह उनके माता-पिता द्वारा नहीं किया जाता तो कन्याओं को यह भी अधिकार देते हैं, कि वह अपनी इच्छा के पुरुष से विवाह कर सकती है, चाहे वह सजातीय हो या विजातीय।

यह आधुनिक युग के मूल्यों के अनुसार भी बेहद प्रगतिशील कदम समझा जा सकता है, हालांकि बाल विवाह को उचित नहीं ठहराया जा सकता। कौटिल्य ने अपने ग्रंथ में कन्याओं के भरण पोषण का दायित्व उनके माता-पिता को दिया है तथा उनकी अनुपस्थिति में जेष्ठ भ्राता को। कन्याओं को यह भी अधिकार दिया गया है, कि जब संपत्ति का बंटवारा हो रहा हो, तो विवाह आदि के खर्च की धनराशि व अपनी पैतृक संपत्ति से ले सकती है। इसके अतिरिक्त अन्य परिस्थिति में भी उत्तराधिकार की भागी हो सकती थी। वह कन्याओं के भरण-पोषण, जीविकोपार्जन, सुदृढ़ीकरण के समर्थन के साथ उनके साथ किए जाने वाले किसी भी प्रकार के अत्याचार का कड़ा विरोध करते हैं। कौटिल्य ने अपने ग्रंथ में बलात्कार जैसे अपराध के लिए कठोर दंड का प्रावधान किया है (रंगराजन, 1987)। इस प्रकार माना जा सकता है कि उन्होंने संतुलित दृष्टिकोण अपनाया है।

इसके अलावा उन्होंने एक महिला के जीवन के विभिन्न चरणों में उसकी भूमिका के आधार पर उनके अधिकारों का अलग-अलग वर्णन किया है तथा उसकी स्थिति को समझाने का प्रयत्न भी किया है। विवाह के बाद जब कोई महिला पत्नी की स्थिति प्राप्त कर लेती है, तो उसको उन्होंने चार महत्वपूर्ण अधिकार और कर्तव्य बतलाए हैं ,जिसमें तलाक का अधिकार, पुनर्विवाह का अधिकार, स्त्रीधन का अधिकार शामिल है। कौटिल्य पति-पत्नी में आपसी सहभागिता का समर्थन करते हुए उसे महत्वपूर्ण स्थान देते हैं। वह पत्नी को सेविका के रूप में नहीं देखना चाहते, बल्कि उसे बराबरी का दर्जा देते हुए यह भी कहते हैं, कि पति के साथ साथ पत्नी भी पति से सेवा सुश्रुषा पाने की अधिकारिणी है (जाइसवाल, मार्च- अप्रैल, 2001)। दोनों को एक दूसरे का देखभाल करना चाहिए और ऐसा ना करने पर उसे दंडित करने का प्रावधान भी करते हैं। परस्पर प्रेम के अभाव में पति पत्नी को तलाक का अधिकार भी देते हैं किंतु इसमें दोनों की सहमति को अनिवार्य मानते हैं। स्त्री के लिए कई प्रावधान किए हैं, चाहे तो ससुर की सहमति लेकर पुनर्विवाह कर सकती थी। ऐसी दशा में उसे अपने पति से प्राप्त धन पाने का भी अधिकार था परंतु यदि उसके लिए सहमति नहीं थी ऐसी स्थिति में मैं भी वाह पुनर्विवाह की अधिकारी तो है किंतु स्त्री धन पर उसका अधिकार नहीं रह जाता है। इतना ही नहीं कौटिल्य उन स्त्रियों को भी पुनर्विवाह का अधिकार देते हैं, जिनके पति अधिक समय से घर के बाहर रह गए हो और अपने पत्नी बच्चों के भरण-पोषण की व्यवस्था नहीं कर रखे हो। कौटिल्य पत्नियों की सुदृढ़ आर्थिक स्थिति के समर्थक थे, इसके लिए उन्होंने स्त्री धन की व्यवस्था भी की है, जिसमें वृत्ति और आबध्य शामिल है। वृत्ति वह धनराशि होती है, जिसकी मात्रा उन्होंने दो हज़ार पण निश्चित की थी तथा आबध्य जेवर आदि होते हैं, जिसकी मात्रा निश्चित नहीं की जा सकती थी (चंदर, 1970)।

इसके साथ कौटिल्य ने विधवाओं के जीवन के विभिन्न पहलुओं को भी विस्तार से बताया है। उन्होंने अर्थशास्त्र के धर्मस्थानीय अधिकरण में विवाह धर्म के पश्चात सर्वप्रथम धर्मकामा विधवाओं का ही उल्लेख किया है। उन्होंने स्पष्ट किया है, कि पति के मर जाने पर स्त्री यदि धार्मिक जीवन का व्रत स्वीकार करना चाहती है, तो उसे अपने दोनों प्रकार के निजी धन व प्रीति धन पर अपना अधिकार मिलना चाहिए। विधवाओं के जीवन के संरक्षण की भी व्यवस्था दी है, जिसके पास धन ना हो, पति की संपत्ति न हो, ऐसी महिलाओं के लिए राज्य के प्रमुख द्वारा प्रबंध किया है। कौटिल्य ने आम महिलाओं के साथ-साथ गणिकाओं की स्थिति पर भी विस्तार से चर्चा की है। वेश्यावृत्ति की प्रचलित अवधारणा के विपरीत उस काल में की वेश्याओं की स्थिति को सम्मानजनक रूप में देखते हैं। उनका मानना था कि गणिकाये राज्य के आय की महत्वपूर्ण साधन थी और रूप से आजीविका कमाने वाली वेश्या अपनी मासिक आमदनी से दो दिन की कमाई राजस्व के रूप में राजा को देती थी (कौटिल्य)। इसलिए गणिकाओं को अपनी आय की नियमित सूचना गणिका अध्यक्ष को देनी पड़ती थी तथा गणिका अध्यक्ष का कर्तव्य था, कि के भोग धन, माता से मिला धन तथा अन्य आमदनी को दर्ज करें। वह व्यक्तिगत संपत्ति अर्जित के द्वारा माता के अतिरिक्त किसी अन्य को देने का अधिकार नहीं था। अर्थशास्त्र में गणिकाओं को एक सम्मानित व्यवसाय के रूप में प्रस्तुत किया गया है तथा इसमें गणिकाओं के परिवार के अतिरिक्त अन्य योग्य आकर्षक एवं निपुण स्त्रियों के प्रवेश की संभावना भी बताई गई है। इतना ही नहीं, इन वेश्याओं के शिक्षण प्रशिक्षण का संपूर्ण व्यय राज्य वहन करता था। गणिका, दासी तथा नर तथ्यों को विभिन्न कलाओं का ज्ञान देने वाले आचार्यों की आजीविका का प्रबंधन नगरों तथा गांव से आने जाने वाली आचार्यों द्वारा किया जाता था। कौटिल्य ने वृद्ध वेश्याओं के प्रति भी सहानुभूति दिखाते हुए यह कहा है, कि यदि वेश्या वृद्ध हो जाए एवं अपनी वृति कमाने में असमर्थ हो, तो उसे मात्र का कोस्टागार या रसोई की कार्य में नियुक्त कर देना चाहिए।

कौटिल्य ने दास स्त्रियों की भी चर्चा की है। कौटिल्य के समय तक स्त्री दासों की स्थिति समाज में संस्थागत रूप ले चुकी थी। जिन कारणों से पुरुष दास बनाए जाते थे, उन्हीं कारणों से स्त्रियों को भी दास बनाया जाता था। कौटिल्य ने स्त्री दासों की दुर्दशा पर अंकुश लगाने एवं उन्हें राज्य उपयोगी बनाने के लिए अनेक महत्वपूर्ण कदम उठाए। उन्हें राज्य संरक्षण देने से लेकर कई विशेषाधिकार भी दिये गए। इनकी नियुक्ति तथा वेतन को राज्यधीन कर दिया (कौटिल्य)।

निष्कर्ष

अतः यह कहा जा सकता है कि प्राचीन भारतीय समाज में महिलाओं की स्थिति में क्रमशः गिरावट हुई है। वैदिक समाज में महिलाओं को समाज में यथेष्ट स्थान प्राप्त था तथा किसी भी महत्वपूर्ण कार्य गतिविधि में उनकी उपस्थिति अभीष्ट थी। उन्हें न केवल शिक्षा का अधिकार था बल्कि नीति निर्माण से लेकर जीवन के प्रत्येक पहलू में उनका सशक्त हस्तक्षेप था। घर के दायरे के अंदर वह सर्व स्वामिनी हुआ करती थी तथा माताओं को समाज में सर्वोच्च स्थान प्राप्त था। कालांतर में महिलाओं के स्थिति में क्रमशः गिरावट हुई इसका कारण उनका भौतिकीकरण तथा विवाह की आयु में गिरावट माना जा सकता है तथा तथा समय-समय पर नई सामाजिक कुरीतियों के जन्म ने भी उनकी स्थिति को कमजोर किया। अर्थशास्त्र में महिलाओं की स्थिति को देखकर अंदाजा लगाया जा सकता है, कि तत्कालीन समाज में भी प्रकार की महिलाओं के अधिकार एवं

कर्तव्य का पूरा ध्यान रखा गया था। विवाहित स्त्रियों से लेकर स्त्री दासों तक की आवश्यकताओं को ध्यान में रखा जाता था। आज जब हम लैंगिक समानता की बात करते हैं तथा साथ ही साथ स्त्री के अधिकारों की बात करते हैं, तो हमें कहीं भी अन्य देखने की आवश्यकता नहीं है, बल्कि यदि हम अपने मूल को टटोलें और अपनी जड़ों को तलाशने का प्रयास करेंगे तो हमें समाज में महिलाओं के आदर्श स्थिति का एक चित्र देखने को मिल सकता है। यह एक खेद की बात है, कि आज भी हमारे समाज में महिलाओं पर अत्याचार हो रहे हैं, जिनमें बढ़ते हुए बलात्कार की घटनाओं से लेकर तमाम प्रकार के घरेलू हिंसा भी शामिल है। ऐसी परिस्थितियों में यदि हम वैदिक साहित्य में महिलाओं की स्थिति को देखें या फिर अर्थशास्त्र के हिसाब से महिलाओं की आवश्यकता का ध्यान रखें तो निश्चय ही हम महिलाओं के साथ आज भी सामाजिक न्याय को स्थापित करते हुए एक आदर्श समाज की संकल्पना को साकार कर सकते हैं।

संदर्भ सूची

1. एल रंगराजन. (1987). कौटिल्य : द अर्थशास्त्र. दिल्ली: पेंगुइन बुक्स.
2. कैलाश चंद्र जैन. (1971). प्राचीन भारतीय सामाजिक एवं आर्थिक संस्थाएं. भोपाल: मध्य प्रदेश ग्रंथ अकादमी.
3. कौटिल्य. (दि.न.). अर्थशास्त्र.
4. गजानन शर्मा. (1971). प्राचीन भारतीय साहित्य में नारी. इलाहाबाद: रचना प्रकाशन.
5. पी सी चंदर. (1970). kautilya on Love and Morals. kolkata: Ranveer Chunder.
6. महर्षि गौतम. (दि.न.). गौतम धर्मसूत्र.
7. लता सिंघल. (1991). भारतीय संस्कृति में नारी. दिल्ली: परिमल प्रकाशन.
8. सुविरा जाइसवाल. (मार्च- अप्रैल, 2001). female images in the Arthshashtra of Kautilya. Journal of Social Scientist, 58.